हवा के उस भाग की खोज जो जलने व श्वसन में सहायक है

सुशील जोशी

हम देख ही चुके हैं कि बॉयल, हुक और मेयोव के प्रयोगों से स्पष्ट हो चला था कि जलने में हवा की भी भूमिका है और इस क्रिया में हवा का एक भाग ही मदद करता है और वही भाग खर्च होता है। इन वैज्ञानिकों के प्रयोगों ने यह भी स्थापित कर दिया था कि जलना और श्वसन एक-सी क्रियाएँ हैं और इन्हें साथ-साथ समझने के प्रयास शुरू हो गए।

रॉबर्ट बॉयल (1627-1691) ने हवा के जलने में सहायक भाग को नाम दिया - स्पिरिटस नाइट्रो-एरियस। यह देखना रोचक है कि ऐसा विचित्र नाम कहाँ से आया। बॉयल ने 1655 के आसपास दहन के साथ एक प्रयोग

रॉबर्ट हुक निर्वात पम्प के प्रयोग में बॉयल के सहायक के रूप में लैब में काम करते हुए।

और किया था। उन्होंने एक क्रुसिबल में नाइटर यानी सॉल्टपीटर (आजकल इसे पोटेशियम नाइट्रेट कहते हैं) लिया और उसे इतना गर्म किया कि वह पिघल गया। इस पिघले हुए सॉल्टपीटर में कोयले के टुकड़े डाले गए तो वे लौ के साथ दहक उठे। मगर जब काफी कोयला डाल दिया गया तो जलना बन्द हो गया। इस क्रिया के बाद जो अवशेष (राख) बची उसकी जाँच की गई तो वह निष्क्रिय था। मगर जब इस राख में नाइट्रिक अम्ल मिलाया गया तो इसमें सॉल्टपीटर के रवे बनने लगे। इस सॉल्टपीटर को सुखाकर उपयोग करने पर इसने एक बार फिर कोयले के जलने में मदद की।

इस प्रयोग के परिणामों से तो ऐसा लगता था कि 'ज्वलनशील तत्व' को जलाकर बाहर निकाला जा सकता है और फिर 'नाइट्रस' (यानी नाइटरयुक्त) रासायनिक पदार्थ की मदद से बहाल किया जा सकता है। तो सवाल यह उठा कि क्या आग कोई तत्व नहीं बल्कि प्रकृति की कुदरती शक्ति है?

बगैर हवा के दहन

अब बॉयल देखना चाहते थे कि क्या सॉल्टपीटर हवा की अनुपस्थिति

में जलने में मदद करता है। इसके लिए उन्होंने निम्न लिखित प्रयोग किया।

पहले निर्वात पम्प के बेलनाकार पात्र (रिसीवर) में से हवा निकालकर यह दर्शाया कि ऐसे बर्तन में कोयला या गन्धक नहीं जलते जबकि हवा की उपस्थिति में दोनों पदार्थ जलते हैं। इसके बाद उन्होंने देखा कि इनमें से किसी भी पदार्थ में यदि थोड़ा सॉल्टपीटर मिला दिया जाए, तो ये निर्वात में भी आग पकड़ लेते हैं। इसके आधार पर उनका निष्कर्ष था कि हवा और सॉल्टपीटर में कोई चीज़ समान है जो दहन में मददगार है (अलबत्ता, इस 'समान चीज़' को पृथक करने का काम करीब सवा सौ साल बाद ब्रिटिश रसायनज्ञ जोसेफ प्रिस्टले और स्वीडिश रसायनज्ञ कार्ल शीले ने किया)। इस समान चीज़ को बॉयल और मेयोव ने 'स्पिरिटस नाइट्रो-एरियस' (यानी हवा का नाइटर तत्व) नाम दिया।

इसी प्रकार से एक अन्य वैज्ञानिक थॉमस विलिस ने एक प्रयोग किया था जिससे भी ऐसा ही संकेत मिलता था। उन्होंने सोने के लवण गोल्ड फल्मिनेट को एक चम्मच में लेकर उस पर एक भारी सिक्का रख दिया। अब यदि इस चम्मच को मेज़ पर हल्के-से ठोंका जाता, तो चम्मच में रखे रसायन में ज़बर्दस्त विस्फोट होता। विलिस ने तर्क किया कि गोल्ड फल्मिनेट बगैर चिंगारी के भी आग पैदा कर सकता है।

उक्त प्रयोगों के आधार पर रॉबर्ट हुक ने दहन को लेकर अपना एक सिद्धान्त भी प्रस्तुत किया था। उनका मत था कि ज्वलनशील पदार्थों में एक वाष्पशील 'सल्फ्यूरस' तत्व होता है। जब ऐसे पदार्थ को गर्म किया जाता है और इसका सम्पर्क हवा से होता है तो हवा में मौजूद 'नाइट्रस वायु' या 'नाइटर वायु' इस 'सल्फ्यूरस' तत्व के निकलने में मदद करती है। इसलिए लकड़ी, कोयले जैसी ज्वलनशील चीज़ें निर्वात में नहीं जलतीं क्योंकि वहाँ कोई नाइटर वायु नहीं होती जो सल्फ्यूरस तत्व को बाहर निकाल सके। इस सिद्धान्त के मुताबिक गन पावडर गर्म करने पर स्वतः आग पकड़ लेता है क्योंकि उसमें नाइटर का स्रोत मौजूद होता है।

फेफड़ों में खून व नाइटर वायु

दहन को लेकर जो काम उन्होंने किया था, उसके ही आधार पर वे श्वसन को भी समझने को उत्सुक थे। यह वह समय था जब विलियम हार्वे रक्त संचार के बारे में काफी कुछ खुलासा कर चुके थे और कुछ हद तक श्वसन से इसका सम्बन्ध भी स्थापित कर चुके थे। हार्वे यह दर्शा पाए थे कि शिराओं की अपेक्षा धमनियों में खून का रंग थोड़ा अलग होता है और इसका सम्बन्ध फेफड़े में रक्त द्वारा सोखी गई हवा से है। 1667 में हुक ने सुझाव दिया कि सम्भव है कि फेफड़ों में खून 'नाइटर वायु' का अवशोषण करता हो।

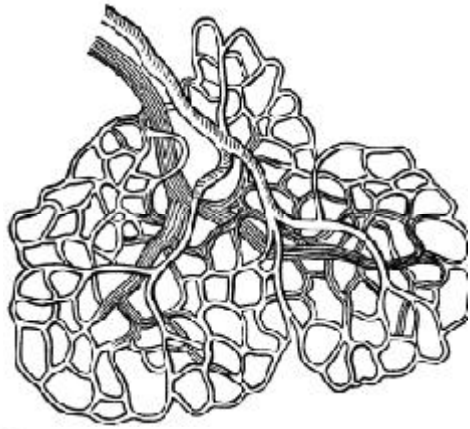

विलियम हार्वे और रक्त संचार

वैसे ये प्रयोग हुक ने खुद पर ही किए थे। वे एक सीलबन्द कक्ष में बैठ गए जिसमें से हवा धीरे-धीरे निकाली गई। इस साहसिक प्रयोग के दौरान हुक ने कानों में दर्द और बहरापन महसूस किया था।

हवा का दहन में सहायक हिस्सा

बॉयल ने मत व्यक्त किया कि हवा का यह हिस्सा (जलने में सहायक हिस्सा) नाइटर (शोरे) के अम्लीय भाग का एक अंग है। उनके मुताबिक स्वयं शोरा क्षार और स्पिरिटस एसिडस (यानी अम्लीय तत्व) से मिलकर बनता है।

मेयोव ने परिकल्पना प्रस्तुत की कि नाइट्रो-एरियस के कण जलने वाली वस्तु से जुड़ जाते हैं; यह नाइट्रो एरियस या तो हवा में उपस्थित होता है या स्वयं जलने वाली वस्तु में मौजूद रहता है। जलने वाली वस्तु के साथ नाइट्रो-एरियस के कण जुड़ते ज़रूर हैं क्योंकि यदि एंटीमनी को एक बन्द बर्तन में रखकर बिल्लोरी काँच की मदद से जलाया जाए तो उसका वज़न बढ़ता है। इसकी व्याख्या तभी हो सकती है जब नाइट्रो एरियस के कण एंटीमनी से जुड़ रहे हों।

फाइलो, दा विंची, बॉयल और मेयोव जैसे वैज्ञानिकों ने ज़रूर यह माना था कि उनके प्रयोग दर्शाते हैं कि हवा

तत्व क्या हैं?

यहाँ इस बात पर चर्चा कर लेना उपयोगी होगा कि तत्व से हम क्या समझते हैं। रसायन शास्त्र के अध्यापन में काफी शुरुआती अवस्था में ही तत्व, यौगिक और मिश्रण पढ़ा दिए जाते हैं। जिस अर्थ में हम आजकल तत्वों की बात करते हैं, वह परिभाषा सबसे पहले रॉबर्ट बॉयल ने दी थी। अपनी पुस्तक दी स्केप्टिकल कायमिस्ट (शंकालु रसायनज्ञ, 1661) में बॉयल ने तत्वों की यह परिभाषा दी थीः *'तत्वों से मेरा आशय उन प्राथमिक और सरल, या पूर्णतः अमिश्रित पदार्थों से है, जो किन्हीं अन्य पदार्थों से या एक-दूसरे से नहीं बने हैं, और जिनसे मिलकर वे सारे पदार्थ बने होते हैं, जिन्हें आदर्श मिश्रित पदार्थ (आजकल की भाषा में यौगिक) कहते हैं और जिन्हें अन्ततः उनमें (यानी तत्वों में) विघटित किया जा सकता है।'*

इसका अर्थ है कि तत्व वे पदार्थ हैं जिन्हें आप और सरल पदार्थों में विभक्त नहीं कर सकते। इसी परिभाषा को ज़्यादा व्यावहारिक रूप देते हुए एन्तोन लेवॉज़िए ने हमें वह परिभाषा दी थी जो आज भी मान्य हैः ऐसे सारे पदार्थ जिन्हें हम आगे विभाजित नहीं कर सकते, उन्हें तत्व माना जाएगा। हम यह पक्का नहीं कह सकते कि जिन पदार्थों को हम सरल मानते हैं, वे दो या दो से अधिक सरल पदार्थों से मिलकर नहीं बने हैं। बात सिर्फ इतनी है कि आज तक उनका पृथक्करण नहीं किया जा सका है। अलबत्ता, हम उन्हें तब तक तत्व मानेंगे जब तक कि अनुभव और अवलोकनों से इसके विरुद्ध प्रमाण न मिल जाएँ।

एक तत्व नहीं बल्कि मिश्रण है। मगर पूर्व अवधारणा थी कि अग्नि और वायु, दोनों तत्व हैं। यथास्थिति में बहुत जड़त्व होता है। लिहाज़ा, अग्नि और वायु को तत्व न मानना आसान भी नहीं था। काफी समय तक कोशिशें होती रहीं कि जलने (और श्वसन) की कोई ऐसी व्याख्या मिल जाए जो अग्नि और वायु को तत्व मानकर आगे बढ़े। इन दोनों की तात्विक हैसियत बरकरार रखते हुए जलने की व्याख्या करने की कोशिश का नाम 'फ्लॉजिस्टन' है। अगले अंक में हम फ्लॉजिस्टन की बात करेंगे। फ्लॉजिस्टन का सिद्धान्त भी लगभग इसी दौरान यानी सत्रहवीं सदी में उभरा था।

सुशील जोशीः एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।